बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 83

मोदी की जीत

तीन दशक पहले कांग्रेस केंद्रित राजनीतिक व्यवस्था में बदलाव आया और हिंदू लामबंदी की शुरुआत हुई। उसके बाद की चौथाई सदी में नए जाति आधारित क्षेत्रीय दलों का उदय हुआ। फिर गठबंधन सरकारों का दौर आया। अब वह बदलाव पूरा हो चुका है और भारतीय जनता पार्टी ने उत्तर तथा पश्चिमी भारत पर कब्जे के बाद पूर्व और दक्षिण में पहुंच बनानी शुरू कर दी है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और पार्टी अध्यक्ष अमित शाह की टीम को इस व्यापक जीत के लिए बधाई दी जानी चाहिए।

प्रचार अभियान के दौरान शायद ही किसी ने यह सोचा होगा कि भाजपा का मत प्रतिशत और सीट दोनों बढ़ेंगे। कई लोगों का मानना था कि 2014 की जीत बंटे हुए विपक्ष की वजह से हुई थी और केवल 31 फीसदी वोट के साथ पार्टी को बहुमत मिल गया था। हालिया विधानसभा चुनावों और उपचुनावों में हार तथा विपक्षी दलों के गठबंधन के बाद माना जा रहा था कि 2019 में भाजपा का प्रदर्शन खराब होगा। परंतु परिणाम पहले से बेहतर आए। सरकार ने आर्थिक मोर्चे और भ्रष्टाचार पर विपक्ष के हमलों को विफल कर दिया।

इसमें मोदी की भूमिका अहम रही। कुछ महीने पहले जिन राज्यों में विधानसभा चुनाव में पार्टी का प्रदर्शन कमजोर था, वहां उसकी जीत इसकी बानगी है। ओडिशा में जहां विधानसभा और लोकसभा के चुनाव एक साथ हुए वहां भी ऐसा देखने को मिला। विधानसभा में मतदाता विकल्प पर विचार करते हैं लेकिन राष्ट्रीय स्तर पर उनका भरोसा भाजपा पर है।

इंदिरा गांधी ने देश की विचार प्रक्रिया में अनुत्पादक समाजवाद की पैठ की। मोदी क्या करेंगे? आर्थिक मोर्चे पर उन्होंने अब तक कुछ बड़ा नहीं किया है। सामाजिक और राजनीतिक धरातल पर उन्होंने देश का डीएनए ही बदल दिया है। वह दूसरे कार्यकाल में प्रवेश कर रहे हैं। तत्काल कोई सांस्थानिक उपाय नहीं हो सकता लेकिन रामजन्मभूमि विवाद और कश्मीर घाटी का निस्तारण लंबित है। राहुल गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस जहां की तहां है। यह भ्रम भी दूर हो गया है कि प्रियंका गांधी के आगमन से कुछ सुधार हो सकता है। अमेठी इसका उदाहरण है। कांग्रेस खुद को इस हालत से कैसे उबारेगी यह देखने वाली बात होगी। पार्टी बिना गांधी परिवार के बच नहीं सकती और उसके साथ वह विकसित नहीं हो सकती।

छोटे दलों की स्थिति तो और भी खराब है। एक समय दबदबा रखने वाले राष्ट्रीय जनता दल और राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी जैसे दलों की हालत खस्ता हो गई। तृणमूल कांग्रेस और बीजू जनता दल तथा तेलंगाना राष्ट्र समिति के समक्ष भी भाजपा के चलते विकल्प सीमित हो रहे हैं। सन 1990 के दशक में उभरे ये दल जल्द ही अतीत बन सकते हैं। देश में एकदलीय लोकतंत्र का उभार हो रहा है।

शेयर बाजार की प्रतिक्रिया भी उत्साह से भरी हुई है। स्थायी सरकार निवेशकों के लिए राहत भरी है लेकिन मुनाफावसूली भी देखने को मिली। आगे कठिन चुनौतियां भी हैं। जनवरी-मार्च के सकल घरेलू उत्पाद के आंकड़े अगले सप्ताह आएंगे। बजट आने के बाद यह पता चल सकेगा कि सरकार के पास खपत बढ़ाने की क्या गुंजाइश है। बुनियादी निवेश के लिए भी सरकार के पास धन नहीं है और निजी निवेश रुका हुआ है।

नीतिगत बदलाव की बात करें तो सवाल यह है कि मोदी ने पहले कार्यकाल से क्या सीखा और क्या वह आगे सुधार अपनाएंगे? निर्यात में ठहराव और विनिर्माण में नाकामी को हल करना होगा। कृषि क्षेत्र पर विशेष ध्यान देना होगा। श्रम सुधारों को अंजाम देना होगा। ऋण की उपलब्धता और लागत छोटे उपक्रमों के लिए समस्या है। मंत्रिमंडल गठन पर भी नजर रखनी होगी। अरुण जेटली स्वास्थ्य कारणों से पीछे हटे तो वित्त मंत्री का पद अहम निर्णय होगा। अमित शाह कैबिनेट में शामिल हो सकते हैं। तीन अनुभवी पूर्व मुख्यमंत्रियों को भी राज्यसभा में लाकर उनकी प्रतिभा का इस्तेमाल किया जा सकता है।

अजय मोहंती

मोदी-शाह ने कांग्रेस और अन्य दलों को पीछे छोड़ा

मोदी सरकार संप्रग की तुलना में कल्याण योजनाओं के क्रियान्वयन और मुद्रास्फीति को नीचे रखने में अधिक कारगर रही। वहीं कांग्रेस के लिए मोदी को चोर कहना उलटा पड़ गया।

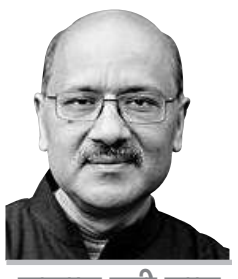

चुनाव की बात

शेखर गुप्ता

लोकसभा चुनाव 2019 के नतीजों से नजर आने वाले बिंदु मेरे हिसाब से इस तरह हैं:

1. भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) और कांग्रेस दोनों ने ही बुनियादी तौर पर अलग रणनीतियों पर चुनाव लड़ा। भाजपा इसे राष्ट्रपति-शैली का चुनाव बनाना चाहती थी। वहीं कांग्रेस और उसके सहयोगी दलों ने इसे 543 सीटों पर अलग-अलग लड़ा जाने वाला चुनाव बनाने की कोशिश की लेकिन वे नाकाम रहे। भाजपा इस राष्ट्रपति-शैली वाला चुनाव बनाने में पूरी तरह सफल रही और उसमें केवल एक उम्मीदवार नरेंद्र मोदी थे।

2. कांग्रेस जाल में बुरी तरह फंस गई। उसने सांकेतिक रूप से भी विकल्प पेश करने की जहमत नहीं उठाई और उसके हमले केवल मोदी तक ही केंद्रित रहे। समस्या यह है कि दुश्मन की ताकत से मुकाबला करना कठिन होता है। आपके पास कोई विश्वसनीय संदेश नहीं होने पर यह कदम दु:साहसी भी हो सकता है। इसके जवाब में कांग्रेस ने जो डेढ़ जुमले उछाले, वे भी पार्टी के समर्पित मतदाताओं के सिवाय दूसरों में उत्साह नहीं भर सके। चौकीदार चोर है (पूरा) और राफेल (आधा) के जरिये कांग्रेस मोदी को भ्रष्ट ठहराना चाहती थी। राहुल का अपनी सभाओं में लगने वाले 'चोर' नारे को जनमत में बदलाव का प्रतीक समझ लेना रीट्वीट को वोट समझने जैसा है।

3. 'प्यार और सहिष्णुता' की बात सुनने में अच्छी और सुकूनदायक लगती है लेकिन यह भक्तों की मंडली में ही अच्छा लगता है। मतदाताओं को एक सकारात्मक विकल्प चाहिए। कांग्रेस और राहुल ने न्याय योजना पेश की लेकिन वह काफी जटिल और देर से लाई गई थी। चुनाव अभियान के दौरान 10 हफ्तों के अपने भ्रमण के दौरान मुझे एक भी ऐसा लक्षित मतदाता नहीं मिला जिसे इसके बारे में पता भी हो। आंकड़ों के मुताबिक करीब आधे मतदाताओं को न्याय योजना के बारे में पता था लेकिन वे लोग समाज के ऊपरी तबके के लोग थे। इसका मतलब है कि जिन लोगों के लिए यह योजना लाने की बात कही गई, उन्हें इसके बारे में जानकारी ही नहीं थी।

4. अमित शाह और नरेंद्र मोदी ने गठबंधन बनाने का काम काफी अच्छे ढंग से अंजाम दिया। किसी मुकाबले में सबसे आगे रहने वाला एक सशक्त चुंबक की तरह काम करता है। लेकिन मोदी-शाह ने बड़ा दिल भी दिखाया। बिहार में नीतीश कुमार की पार्टी को अधिक सीटें देना इसका सबसे अच्छा उदाहरण है। इसकी तुलना उत्तर प्रदेश, दिल्ली और हरियाणा में कांग्रेस के तेवर से कीजिए। भाजपा ने भविष्य पर नजर रखते हुए गठबंधन किए जबकि कांग्रेस अपने गौरवशाली अतीत से ही चिपकी रही।

5. केरल और पंजाब को छोड़कर बाकी सभी जगहों पर भाजपा का रथ रोकने का काम क्षेत्रीय दलों ने किया है। इनमें तमिलनाडु भी शामिल है। केरल में भाजपा ने अभी दस्तक देनी शुरू ही की है लेकिन वामदलों के पराभव से उसका रास्ता बनने लगा है। पंजाब में कांग्रेस को यह कड़वा संदेश मिला कि राज्य का एक मजबूत नेता लहर को भी रोक सकता है। इसने भाजपा की वह रणनीति आसान कर दी: सीधे उन राज्यों पर धावा बोलो जहां कांग्रेस मुख्य प्रतिद्वंद्वी है। बाकी राज्यों में क्षेत्रीय दलों से गठजोड़ बनाओ। आंध्र प्रदेश में वाईएसआर कांग्रेस और तेलंगाना में टीआरएस पर नजर रखें। ओडिशा में नवीन पटनायक के साथ आधी बात बन ही चुकी है।

6. आप काफी तर्कसंगत ढंग से मीडिया को दोष दे सकते हैं। भाजपा ने अपने मीडिया संगठन खड़ा करने या उन्हें खरीद लेने के लिए अपनी राजनीतिक ताकत का बेहतरीन इस्तेमाल किया और बाकी मीडिया संगठनों को वस्तुनिष्ठ बने रहने के लिए बाध्य कर दिया। इसके बावजूद कांग्रेस के पास कहने के लिए क्या था? राहुल ने बड़े मीडिया समूहों को साक्षात्कार चुनाव के अंतिम चरणों में दिए। इन साक्षात्कारों को देखने वाले किसी भी व्यक्ति के लिए यह साफ था कि कांग्रेस ट्विटर पर असर और अपने समर्थकों की तारीफ को लेकर भ्रम पालकर बड़ी गलती कर रही है।

7. मोदी के आलोचक कभी भी उन्हें इसका श्रेय नहीं देंगे लेकिन उनकी सरकार प्रमुख कल्याण कार्यक्रम चलाने में काफी असरदार रही। अपने हालिया लेखों में मैंने कहा था कि संप्रग-2 की तुलना में अर्थव्यवस्था एवं आधारभूत ढांचे के मोर्चे पर मोदी सरकार का प्रदर्शन काफी अच्छा रहा। मेरी राय में अखिल भारतीय स्तर पर अगड़ी जातियों का वोट बैंक निचली जातियों एवं अल्पसंख्यक गठजोड़ को काउंटर करता है। महंगाई दर काफी कम रहने से भी रोजगार की कमी एवं निजी आर्थिक दुश्वारियों से पार पाने में मदद मिली।

8. गत पांच वर्षों में छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश एवं राजस्थान में जीत के अलावा गुजरात में मोदी को परेशान कर देना कांग्रेस की मुख्य उपलब्धियां थीं। इससे दो बातें साफ थीं: पहली, ग्रामीण एवं कृषि क्षेत्र का संकट भाजपा मतदाताओं पर चोट कर रहा है और दूसरी, इसका कोई फौरी हल न होने से मोदी राष्ट्रवाद, हिंदुत्व एवं भ्रष्टाचार से जंग के तीन-सूत्री अभियान पर लौट आएंगे। उसमें भी राष्ट्रवाद को केंद्रीय भूमिका मिलनी थी और इस पर उनके सभी चुनौतीकर्ता नाकाम रहे। अभी नवजात भारतीय राष्ट्रवाद का मुकाबला यूरोपीय वामपंथ की सोच से नहीं किया जा सकता है। देशद्रोह कानून खत्म करने, अफस्पा और आधार कानून को कमजोर करने का समर्थन करने वाले महानुभाव शायद किसी और देश में रह रहे थे। इंदिरा गांधी और राजीव गांधी भी भौचक हो जाते। इन कानूनों को नरम करना संपादकीय नजर से अच्छा विचार है लेकिन फिर आपको मत भी संपादकों से ही लेने होंगे।

9. पिछले दशक में चुनाव प्रचार के दौरान मुझे युवाओं के मन में वंशवादी राजनीति एवं कुलीनता को लेकर एक तरह का विरक्ति भाव दिखा। गुजरात से लेकर त्रिपुरा तक और जम्मू से लेकर तिरुवनंतपुरम तक आम राय है कि राहुल गांधी एक अच्छे व्यक्ति हैं लेकिन उनके पास अनुभव नहीं है। अपनी पार्टी के सत्ता में रहते समय उन्होंने किसी मंत्रालय का दायित्व क्यों नहीं संभाला? गैर-प्रतिबद्ध मतदाता अधिक कटु हैं: राहुल अपने रहन-सहन एवं आजीविका के लिए पैसे कैसे जुटाते हैं? मैं भी एक प्रशिक्षित तैराक, पायलट, मार्शल आर्ट्स ब्लैक बेल्ट होना पसंद करता लेकिन उसके लिए पैसे कहां से आएंगे? उनके पास पैसे कहां से आते हैं? हम एक दशक से कहते रहे हैं कि भारत में विचारधारा-पश्चात की पीढ़ी का उदय हो रहा है जिसमें लोग जमीन से उठे और अपने दम पर मुकाम बनाने वाले मोदी को कुलीन परिवार से जुड़े राहुल पर तरजीह देते हैं।

10. इस चुनाव में प्रियंका गांधी क्या कर रही थीं? वह मेहमान कलाकार की तरह थीं और कभी भी उन्हें रणनीतिक भूमिका नहीं दी गई। उत्तर प्रदेश में पुनर्जन्म की कांग्रेस की आसक्ति आत्मघाती है। प्रियंका ने भाजपा से सीधी लड़ाई वाले राजस्थान, मध्य प्रदेश, कर्नाटक और महाराष्ट्र में अधिक फर्क पैदा किया होता। वह कांग्रेस की सबसे सहज प्रचारक थीं लेकिन उन्हें पूर्वी यूपी में जाया कर दिया गया।

11. मोदी अपनी उपलब्धियों का लाभ उठा रहे हैं लेकिन राहुल उनका मुकाबला कर सकते हैं। राहुल ने क्या संप्रग-2 सरकार की उपलब्धियों को गिनाया? टी एन नाइनन ने अपने लेख में इसका जिक्र किया था। वर्ष 2009-14 के बीच 10 जनपथ ने एनएसी की गैर-संवैधानिक सत्ता के बूते अपनी ही सरकार को कमतर किया था क्योंकि उनके दरबारियों को मनमोहन सिंह का दूसरी बार सरकार बनाना रास नहीं आया था। मैंने उसे कांग्रेस की स्वत: प्रतिरक्षा जनित बीमारी बताया था और यह अब भी वैसे ही है।

12. आखिर में, वामदलों के बारे में सोचिए। अपने पुराने किलों- पश्चिम बंगाल एवं त्रिपुरा में उनका खाता भी नहीं खुला है। उसे मिली सीटों में तमिलनाडु का भी योगदान है जहां उसे कांग्रेस एवं द्रमुक का सहयोग मिला है।

सारांशत: परंपरागत समझ कहती है कि हारने वाला जीतने वाले से अधिक सीखता है लेकिन कांग्रेस और भाजपा के मामले में यह तर्क उलटा हो गया है।

मोदी की दोबारा ताजपोशी में खाई और मौका दोनों निहित

दिल्ली डायरी

ए के भट्टाचार्य

सत्रहवीं लोकसभा के लिए सात चरणों में संपन्न आम चुनाव के परिणामों के बाद नरेंद्र मोदी का दोबारा प्रधानमंत्री बनना तय है। एग्जिट पोल आने के अगले ही दिन शेयर बाजारों के सूचकांकों में करीब चार फीसदी की उछाल आ गई थी। गुरुवार को चुनाव परिणाम आने के दिन भी सेंसेक्स ने कारोबार के दौरान 40,000 अंक की रिकॉर्ड ऊंचाई हासिल कर ली। यह नई सरकार से लगी बाजार की आस को बयां करती है।

ऐसे में अगली सरकार में पदासीन लोगों को जनता की अपेक्षाओं के प्रति सतर्क रहना होगा और उन्हें यह भी ध्यान रखना होगा कि किन बातों से परहेज करना है। इस लेख में नई सरकार के समक्ष मौजूद अवसर के साथ ही उसके सामने मौजूद खाई पर भी रोशनी डालने की कोशिश की गई है।

सबसे पहले उस खाई की बात करते हैं जिससे नई सरकार को जरूर बचना चाहिए। राजकोषीय मजबूती के लिए केंद्र की तरफ से उठाए गए कदम मोदी के पिछले पांच वर्षों के कार्यकाल का अहम बिंदु रहे हैं। हालांकि यह और बेहतर हो सकता था लेकिन सरकार के राजकोषीय घाटे का 2013-14 के 4.5 फीसदी से घटकर 2018-19 में जीडीपी के 3.4 फीसदी पर आ जाना भी अच्छा सुधार दिखाता है। वर्ष 2017-18 के बाद सुधार की रफ्तार में खासी गिरावट आई है। आलोचक यह भी कहेंगे कि राजकोषीय घाटे में कमी की गुणवत्ता संदेहास्पद है लेकिन कुल मिलाकर यह रुझान आश्वस्त करने वाला है।

मोदी को अपने दूसरे कार्यकाल में इससे जरूर परहेज करना चाहिए कि सरकार के राजकोषीय सशक्तीकरण की कोशिशों में कोई भी ढील न दी जाए। वर्ष 2020-21 तक राजकोषीय घाटा कम करते हुए जीडीपी के तीन फीसदी तक लाने का लक्ष्य किसी भी ठहराव के बगैर हासिल कर लिया जाना चाहिए। जुलाई 2014 में वित्त मंत्री अरुण जेटली के समक्ष यह विकल्प था कि मनमोहन सरकार के समय पेश अंतरिम बजट में राजकोषीय घाटे को 4.1 फीसदी रखने के लक्ष्य को तिलांजलि दे दी जाए। वह पिछली सरकार को अवास्तविक महत्त्वाकांक्षी राजकोषीय लक्ष्य रखने का दोषी ठहरा सकते थे जिससे अधिक व्यय की गुंजाइश बन जाती। लेकिन जेटली ने उस राह पर चलने के बजाय पुरानी सरकार के लक्ष्य पर ही खरा उतरने की मुश्किल चुनौती स्वीकार की। उससे मोदी सरकार के राजकोषीय सशक्तीकरण प्रयासों की दशा एवं दिशा तय हो गई।

अब वर्ष 2019 में तो राजकोषीय मजबूती की जरूरत और भी बढ़ गई है। अगली सरकार को न केवल वर्ष 2019-20 में राजकोषीय घाटे को 3.4 फीसदी रखने के लक्ष्य पर बने रहना चाहिए बल्कि उसे राजस्व व्यय में कटौती और कर प्रशासन एवं अनुपालन बेहतर कर घाटे में और कमी करने पर भी ध्यान देना चाहिए। अधिक अहम यह है कि उसे राजकोषीय घाटे को तीन फीसदी के मनचाहे लक्ष्य को हासिल करने के लिए एक स्पष्ट एवं वास्तविक समयसीमा भी तय करनी चाहिए।

राजकोषीय मजबूती की तगड़ी प्रतिबद्धता जरूरी है क्योंकि नई सरकार से वृद्धि को बढ़ावा देने के लिए खर्च बढ़ाने की भारी मांग होगी। यह सच है कि आसन्न आर्थिक सुस्ती के घटकों का मुकाबला करने के लिए अधिक निवेश की जरूरत है। लेकिन ऐसी रणनीति अपनाने में दो खतरे भी हैं। पहला, व्यय बढ़ाने के नाम पर सरकार सब्सिडी एवं रियायतों जैसे फालतू, अक्षम एवं बुरी तरह से लक्षित व्यय को बढ़ावा दे सकती है। दूसरा, व्यय में बढ़ोतरी का मतलब सरकारी उधारी में तेजी होगा। इससे निजी क्षेत्र उधारी बाजार से बाहर हो जाएगा और ब्याज दरें भी बढ़ जाएंगी। इन दोनों खतरों से बचा जा सकता है। नई सरकार को यह बात भी माननी होगी कि 2019-20 के अंतरिम बजट में राजस्व के आंकड़े पहले से ही काफी महत्त्वाकांक्षी वृद्धि दरों को परिलक्षित करते हैं। वर्ष 2018-19 में राजस्व संग्रह में आई कमी के मद्देनजर मौजूदा साल में कॉर्पोरेट टैक्स संग्रह 15 फीसदी तक बढ़ने के आसार हैं और व्यक्तिगत आयकर संग्रह भी 32 फीसदी तक बढ़ने की संभावना है (वर्ष 2018-19 में यह केवल नौ फीसदी ही बढ़ा था)। हालांकि भारतीय अर्थव्यवस्था के समक्ष मंदी की चुनौती देखते हुए राजस्व के इन आंकड़ों को हासिल करना काफी चुनौतीपूर्ण होगा।

राजकोषीय मजबूती की कीमत पर व्यय में वृद्धि की योजना बनाना भी खतरनाक होगा। यह सच है कि वर्ष 2019-20 के लिए सरकार का कुल पूंजीगत व्यय मामूली गिरावट के साथ 9.54 लाख करोड़ रुपये होगा जबकि वर्ष 2018-19 में 9.61 लाख करोड़ रुपये रहा था। सरकार का पूंजीगत व्यय आदर्श रूप से बढ़ना चाहिए लेकिन इस विकल्प की तरफ तभी देखा जा सकता है जब घाटे में और वृद्धि रोकने के लिए तमाम दूसरे तरह के राजस्व व्ययों में खासी कटौती की जाए।

सवाल है कि अगले कुछ महीनों में नई सरकार को कौन-सा मौका झपट लेना चाहिए? उसे जल्द-से-जल्द सार्वजनिक क्षेत्र में सुधार का एजेंडा अपनाना चाहिए। सार्वजनिक क्षेत्र में सुधार का मतलब केवल सरकारी-स्वामित्व वाली इकाइयों में सरकारी हिस्सेदारी का विनिवेश ही नहीं है, उसमें गैर-रणनीतिक सार्वजनिक क्षेत्र उपक्रमों का निजीकरण, अव्यवहार्य हो चुकी घाटा उठाने वाली इकाइयों को बंद करना और सार्वजनिक क्षेत्र के अधिक बैंकों का विलय भी है। बंद किए जाने वाले या निजीकरण किए जाने वाले सार्वजनिक उपक्रमों की सूची पहले से ही नीति आयोग के पास है। सार्वजनिक बैंकों के विलय का अगला चरण बिना किसी देरी के चलाया जाए। नई सरकार अपने कार्यकाल के शुरुआती महीनों में आसानी से ऐसे कदम उठा सकती है। राज्यों में विधानसभा चुनावों का अगला चरण सितंबर 2019 के बाद ही शुरू होगा। यानी नई सरकार पर अगले चार महीनों में किसी भी तरह का राजनीतिक दबाव नहीं होगा। नई सरकार को यह मौका झपट लेना चाहिए।

कानाफूसी

होटल नहीं हॉस्टल

लोकसभा की महासचिव स्नेहलता श्रीवास्तव ने कहा है कि संसद में चुनकर आने वाले तमाम नए सदस्यों को होटल में रखने के बजाय राज्य भवनों या वेस्टर्न कोर्ट में रखा जाएगा। वेस्टर्न कोर्ट सांसदों के लिए बनाया गया एक ट्रांजिट हॉस्टल है। लोकसभा चुनाव के परिणाम सामने आने के बाद माना जा रहा है कि शुक्रवार से नए सांसद राजधानी दिल्ली पहुंचने लगेंगे। इससे पहले उन्हें प्राय: होटल में रुकवाया जाता था। कई बार वे महीनों तक होटल में रहते थे जब तक कि उनका बंगला तैयार होता था। श्रीवास्तव ने कहा कि अब लोकसभा सचिवालय ने यह व्यवस्था समाप्त कर दी है। 19वीं लोकसभा के चुनाव परिणाम में भाजपा गठबंधन ने पिछले साल से अधिक सीटें लाकर पूर्ण बहुमत हासिल किया है। वहीं कांग्रेस के प्रदर्शन में पिछली लोकसभा चुनाव परिणाम के मुकाबले कुछ सुधार आया है।

माल्या पर फिल्म

खबर है कि भगोड़े उद्योगपति विजय माल्या जल्दी ही बड़े परदे पर नजर आ सकते हैं। खबरों के मुताबिक माल्या और उनके जीवन पर एक वृत्तचित्र बनाया जा रहा है। इसके लिए उनको जानने वाले लोगों से बात की जा रही है और उनका दृष्टिकोण शामिल किया जा रहा है ताकि वह प्रामाणिक बन सके। इसके लिए उनके कर्मचारियों, साथी उद्योगपतियों और उनकी प्रबंधन टीम के वरिष्ठ सदस्यों से बातचीत की जा रही है। उनके पुत्र सिद्धार्थ माल्या भी इस फिल्म से जुड़ सकते हैं। उन्होंने हाल ही में अपना नाम लॉस ऐंजलिस स्क्रीन एक्टर्स गिल्ड से जुड़वाया है। अभी यह स्पष्ट नहीं है कि वृत्त चित्र की शैली में बनने वाली इस फिल्म को आखिर कब रिलीज किया जाएगा। परंतु यह तय है कि इसे नेटफ्लिक्स पर लॉन्च किया जाएगा। इस सिलसिले में कंपनी के साथ बातचीत जारी है। नेटफ्लिक्स और माल्या की प्रेस टीम ने इस फिल्म को लेकर कोई टिप्पणी नहीं की है। माल्या ने 2016 में भारत छोड़ दिया था और ब्रिटेन को अपना नया ठिकाना बनाया था। उनके खिलाफ प्रत्यर्पण का मामला चल रहा है।

आपका पक्ष

जनसांख्यिकी लाभांश से आर्थिक विकास

किसी भी देश के आर्थिक विकास के लिए प्रौद्योगिकी, तकनीक और कुशल मानव श्रम की जरूरत होती है। विकसित देश विज्ञान और श्रेष्ठ प्रौद्योगिकी के बल पर अपना विकास करते हैं। जर्मनी और जापान जैसे देशों में मानव श्रम की कमी है। इसलिए यह देश विकसित ऑटोमेशन से अपने देश का आर्थिक विकास करते हैं। भारत जैसे विकासशील देश में मानव श्रम पर्याप्त मात्रा में मौजूद है। यहां उत्पादन के लिए महंगे ऑटोमेशन के बदले मानव श्रम का इस्तेमाल करके देश का आर्थिक विकास किया जा सकता है। भारत ने अब तक मानव श्रम से जनसांख्यिकी लाभांश लेने में नाकाम रहा है, क्योंकि यहां अकुशल मानव श्रम है। देश के पास अब भी एक मौका है जहां मानव श्रम के माध्यम से अपना आर्थिक विकास कर सकता है। एक आंकड़े के अनुसार वर्ष 2022 में दुनिया की कामकाजी जनसंख्या में लगभग 15 से 17 प्रतिशत भारतीय होंगे। यह आंकड़ा किसी भी देश के लिए अवसर और चुनौतीपूर्ण साबित हो सकता है, क्योंकि श्रम बाजार में नियोक्ताओं द्वारा योग्य, कुशल कार्यक्षमता और युवा श्रमिकों की मांग होती है। लेकिन भारतीय नियोक्ता कुशल मानव श्रम की किल्लत से जूझ रहे हैं। भारत में 47 करोड़ से ज्यादा लोगों की आयु 18 साल से कम है। भविष्य में इन्हे रोजगार की तलाश होगी। लेकिन परंपरागत शिक्षा पद्धति इन्हें रोजगार के अवसर प्रदान नहीं करती है। इसलिए कौशल और तकनीकी शिक्षा को महत्त्व देना जरूरी हो गया है। सरकार 2015 में स्किल इंडिया योजना लाई थी। इसका मुख्य लक्ष्य 2022 तक 40 करोड़ युवाओं को कौशल प्रदान करना था। यह एक बहुत ही अच्छी योजना है लेकिन इसकी कुछ खामियों को दूर कर इसे और भी व्यापक और असरदार बनाया जा सकता है। देश की शिक्षा नीति में बदलाव कर शिक्षा के साथ कौशल प्रशिक्षण को महत्त्व देना चाहिए। महिलाओं और समाज के हर वर्ग के लोगों को कौशल शिक्षा देने के लिए नई योजनाएं लानी चाहिए। स्किल इंडिया योजना को जारी रखना जरूरी है। केवल सटीक और पर्याप्त नीतियों से युवा श्रम को तकनीकी रूप से कुशल मानव श्रम के सबसे बड़े स्रोत में बदला जा सकता है। इस तरह हम जनसांख्यिकी लाभांश लेकर देश में विकास ला सकते हैं।

निशांत महेश त्रिपाठी, नागपुर

सरकार को देश की बड़ी आबादी के मानव श्रम का उचित इस्तेमाल करना चाहिए

दवाओं का मूल्य नियंत्रण जरूरी

भारत में पिछले 26 वर्षों में कैंसर पीड़ित मरीजों की संख्या दोगुनी हो गई है। स्तन, गर्भाशय, मुंह और फेफड़े के कैंसर से पीड़त मरीजों की संख्या अधिक है। वर्ष 2018 से 2040 के बीच कीमोथेरेपी की जरूरत वाले रोगियों की संख्या 98 लाख से बढ़कर 1.5 करोड़ हो जाएगी। निम्न व मध्यम आय वाले देशों में कीमोथेरेपी के योग्य रोगियों की संख्या में 2018 के 63 प्रतिशत से 2040 में 67 प्रतिशत तक की वृद्धि देखी जाएगी। आमतौर पर ग्रामीण क्षेत्रों में पुरुष मुंह के कैंसर से प्रभावित होते हैं जबकि शहरी क्षेत्रों में फेफड़े का कैंसर ज्यादा होता है। हालांकि कैंसर की बीमारी में तेजी से वृद्धि के साथ यह एक महामारी बन गई है। विडंबना है कि कैंसर की दवाएं बहुत महंगी हैं और आम आदमी की पहुंच से दूर है। लोगों को राहत प्रदान करने के लिए इसकी दवा का मूल्य नियंत्रण आवश्यक है।

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।